रौद्र नाद

हे पाखण्ड-खण्डिनी कविते! तापिक राग जगा दे तू।
सारा कलुष सोख ले सूरज, ऐसी आग लगा दे तू।।
कविता सुनने आने वाले, हर श्रोता का वन्दन है।
लेकिन उससे पहले सबसे, मेरा एक निवेदन है।।

आज माधुरी घोल शब्द के, रस में न तो डुबोऊँगा।
न मैं नाज-नखरों से उपजी, मीठी कथा पिरोऊँगा।।
न तो नतमुखी अभिवादन की, भाषा आज अधर पर है।
न ही अलंकारों से सज्जित, माला मेरे स्वर पर है।।

न मैं शिष्टतावश जीवन की, जीत भुनाने वाला हूँ।
न मैं भूमिका बाँध-बाँध कर, गीत सुनाने वाला हूँ।
आज चुहलबाज़ियाँ नहीं, दुन्दुभी बजाऊँगा सुन लो।।
मृत्यु-राज की गाज काल-भैरवी सुनाऊँगा सुन लो।।

आज हृदय की तप्त बीथियों, में भीषण गर्माहट है।
क्योंकि देश पर दृष्टि गड़ाए, अरि की आगत आहट है।।
इसीलिए कर्कश-कठोर वाणी का यह निष्पादन है।
सुप्त रक्त को खौलाने का, आज विकट सम्पादन है।।

कटे पंख सा विवश परिन्दा, मन के भीतर जिन्दा है।
कुछ लोगों के कारण भारत, बुरी तरह शर्मिन्दा है।।
जितना खतरा नहीं देश को, दुश्मन के हथियारों से।
उससे ज्यादा भय लगता है, छुपे हुए गद्दारों से।।

ये इतने मतलब परस्त हैं, धर लें धन की पेटी को।
बदले में गिरबी रख सकते, हैं माँ-बीवी-बेटी को।
दाँव लगे तो धरा-धाम परिवेश बेच सकते हैं ये।।

क्षणिक स्वार्थ के लिए स्वर्ग सा, देश बेच सकते हैं ये।।

जासूसों की ठण्ड घटाने को, सिगड़ी रख देते ये।
गुस्ताखों की भूख मिटाने को, रबड़ी रख देते ये।।
देशद्रोहियों के मुख में मुर्गी तगड़ी रख देते ये।
जयचन्दों के अभिनन्दन में, झट पगड़ी रख देते ये।।

जिनकी सोच-समझ पर कुण्ठा, के जाले पड़ जाते हों।
राष्ट्र-गीत गाते ही अधरों, पर ताले पड़ जाते हों।।
जिनकी शक्ल देखते रोटी, के लाले पड़ जाते हों ।
कौओं की क्या कहें कबूतर, तक काले पड़ जाते हों।।

उनके सम्मुख अपना माथा, रोज टेकना पड़ता है।
जिन्हें देखना नहीं चाहता, उन्हें देखना पड़ता है।।
रोटी खाते जिस धरती की, उसकी गरिमा भूल गए।
गोबर सा भर गया बुद्धि में, माँ की महिमा भूल गए।।

जिनको अन्तर नहीं सूझता, कंकर और पहाड़ों में।
कौन शक्ति बलबती सोचते,भों-भों और दहाड़ों में।।
उनकी चिन्ता नहीं मुझे वे, सुनें या कि अनसुना करें।
बैठें या फिर चले जाँय, घर पर जाकर सिर धुना करें।।

वही रहे नर-नाहर जिसमें, सुनने का दम-गुर्दा हो।
वरना चला जाय बैठक से, जिन्दा हो या मुर्दा हो।।
मैं आया हूँ वीरों की रग-रग में रोश जगाने को।
कायर में ही नहीं नपुंसक तक में जोश जगाने को।

इतना है विश्वास कापुरुष सुन लें मेरी वाणी को।
निश्चय ही हथियार उठा लेंगे, कर में कल्याणी को।।
मेरी आग भरी वाणी से, दहक उठेगी यह दुनिया।
ज्वालाएँ बरसेंगी मुख से, धधक उठेगी यह दुनिया।।

जिन लपटों की लपक देख, थर्राती लोहे की छाती।

पिघल-पिघल कर मोम सरीखी, पानी-पानी हो जाती।।
उसी आग की चिनगारी को, बिछा रहा हूँ डग-डग में।
कोशिश है भर दूँगा बाँके, वीरों की मैं रग-रग में।।

मैं छन्दों में ढाल चुका हूँ, लावा ज्वालामुखियों का।
जबरदस्त आह्वान किया है, योद्धा सूरजमुखियों का।।
हिम्मत हो तो ही तुम सुनना, वरना जाना भाग कहीं।
कविता सुनने के चक्कर में, लगा न लेना आग कहीं।।

छोटे मुँह से बड़ी बात बेशक तुमको चुटकुला लगे।
या आए इस सुप्त काल में, प्रलयंकर ज़लज़ला लगे।।
मेरी कविता तुम को चाहे, कला लगे या बला लगे।
यह भारत का रौद्र नाद है, बुरा लगे या भला लगे।।

कपटी मन के पेट दर्द की, जड़ी हमारे पास नहीं।
छूमन्तर कर देने वाली, छड़ी हमारे पास नहीं।।
इसीलिए इस शेष सभा को, काज बताने आया हूँ।
मैं यौवन के स्वर्ण-काल का, राज बताने आया हूँ।।

तुम क्या हो? तुम क्यों आये हो? क्या करना मालूम नहीं?
कैसे जीना तुम्हें और कैसे मरना मालूम नहीं ??
इसीलिए इस ज्ञान-खण्ड की, शिक्षा बहुत जरूरी है।
जन्म लिया जिस भू पर उसकी, रक्षा बहुत जरूरी है।।

हे बलिवीरो! उठो सुनो तुम, जो चाहो कर सकते हो।
मात्र आत्म-बल के बल पर, तन में पौरुष भर सकते हो।।
तुम्हें किसी अदृश्य शक्ति ने, जो सामर्थ्य परोसा है।
जिस के बल पर मातृभूमि को, तुम पर अटल भरोसा है।।

जब तक तुम हो तब तक तय है, दुश्मन सफल नहीं होगा।
जीव-जन्तु क्या जड़-चेतन का, जीवन विकल नहीं होगा।।
तुम चाहो तो कण कथीर के, कंचन-कोहिनूर कर दो।
चट्टानों को दबा-दबा कर, कर से चूर-चूर कर दो।।

पलक खोलते ही पल में, तूफान मचलने लग जाएँ।
एक फूँक में आँधी के, अरमान उछलने लग जाएँ।।
पाँव पटकते ही पानी की, धार धरा से फूट पड़े।
तुम चाहो तो पूरी ताकत, इन्द्र-बज्र सी टूट पड़े।।

आत्मबली वीरों को किंचित, भय न किसी खाँ का होता।
बीच बैरियों के लड़ते हैं, बाल नहीं बाँका होता।।
सिर पर कफन बाँध कर चलना, व्रत होता रणधीरों का।
तभी साथ मिलता तूफानी, आंँधी और समीरों का।।

यश-काया से बढ़कर जग में, कोई भी सम्मान नहीं।
राष्ट्र-यज्ञ में प्राणाहुति से, बड़ा और बलिदान नहीं।।
रात्रि घनी है जंग ठनी है, दीपक बनकर जलना है।
अँधियारों के बीच बैठकर, मुख से आग उगलना है।।

अब जो राष्ट्र-प्रेम के चिन्तन, का मन्तव्य समझते जो।
मातृभूमि की सेवा को, पहला कर्तव्य समझते जो।।
उनसे ही मैं कह सकता हूँ, मरने-मिटने-जीने की।
लुटने और लुटा देने की, छक कर पीयूष पीने की।।

शौर्य-शक्ति की जीवटता की, सक्रियता की साहस की।
दुश्मन से लोहा लेने की, पूनम और अमावस की।।
उन सबको मन से प्रणाम है, मेरा बस इतना कहना।
दुश्मन घात लगाकर बैठे, हैं तुम चौकन्ने रहना।।

आज नहीं तो कल इन हालातों से पाला पड़ना है।
हमें युद्ध दोगलों और दुश्मन दोनों से लड़ना है।।
इसीलिए हर प्रहर प्रखर हो काल-बाँध कटिबद्ध रहो।
क्या जाने कब बैरी कर दे, हमला तुम सन्नद्ध रहो।।

गिरेन्द्रसिंह भदौरिया "प्राण"